Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 17, (2022) 79-84 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v17i1.12

Observation of Tavyattvyadi Kritya Suffixes according to Ashtadhyayi syllabus in Ravanarjuniyam epic

Deepak Kumar Dwivedi and Kusum Dobriyal

Department of Sanskrit HNB Garhwal University Campus Pauri Garhwal 246001

Corresponding AuthorEmail id: 19deepakdwivedi91@gmail.com

Received: 29.11.2022; Revised and accepted: 30.12.2022
©Society for Himalayan Action Research and Development

Abstract: It is well known that Sanskrit language has the oldest and most important place in all the languages of the world; therefore, it is the foundation of human civilization in this world. The literature of Sanskrit language is very rich and vast all over the world and it would not be an exaggeration to say that all the traditions of ancient Indian knowledge and science are embedded in this language. To know or understand the language or its standard form properly, it is essential to have knowledge of the grammar of that language. Ashtadhyayi composed by Acharya Panini is the main grammar of Sanskrit language, under which about 4000 sutras have been composed. Talking about the structure of this grammar, its structure is similar to a programming language like a modern computer. In Sanskrit language, there are two types of words on the basis of grammar: verb and noun. The use of participles within the noun is very common in Sanskrit literature. The main objective of this particular research paper is to observe and present the characteristics of Tvayadi Kritya Suffixes in the context of Ravanarjuniyam epic on the basis of grammar under these participle terms.

Keywords: Paniniya Ashtadhyayi, Sanskrit Participle, Process Book, Nature-Suffix Department, Pratipadik, Action suffix

रावणार्जुनीयं महाकाव्य में अष्टाध्यायी पाठक्रमानुसार तव्यत्तव्यादि कृत्य प्रत्ययों का अवलोकन

दीपक कुमार द्विवेदी एवं कुसुम डोबरियाल

संस्कृत विभाग गढ़वाल विश्वविद्यालय परिसर पौड़ी गढ़वाल उत्तराखण्ड

सारांशिका

यह सर्वविदित है कि संस्कृत भाषा का विश्व की समस्त भाषाओं में प्राचीनतम एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसलिये इस जगत् में मानवीय सभ्यता की आरम्भिक अथवा मूलभूत ज्ञान की जो भी सर्जना है वह सब संस्कृत वाङ्मय में विद्यमान है। विश्वभर में संस्कृत भाषा का साहित्य अत्यधिक समृद्ध एवं विशाल है तथा कहने में अत्युक्ति भी न होगी कि प्राचीन भारतीय ज्ञान–विज्ञान की तो समस्त परम्परायें इसी भाषा में निहित है। परन्तु किसी भी भाषा को अथवा उसके मानकीय रूप को समुचित रूप से जानने अथवा समझने के लिये उस भाषा के व्याकरण का ज्ञान होना परमावश्यक है। आचार्य पाणिनि द्वारा रचित अष्टाध्यायी संस्कृत भाषा का प्रमुख व्याकरण है। जिसके अन्तर्गत लगभग 4000 सूत्रों की रचना की गयी है। इस व्याकरण की संरचना की बात करें तो इसकी संरचना एक आधुनिक कम्प्यूटर की प्रोग्रामिंग भाषा के ही सदृश है। संस्कृत भाषा में व्याकरण के निकष पर शब्द दो प्रकार के होते हैं– क्रियापद तथा नामपद। नामपद के अन्तर्गत ही कृदन्तों का प्रयोग संस्कृत साहित्य में बहुतायत से होता है। इन्ही कृदन्त पदों के

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 17, (2022) 79-84 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v17i1.12

अन्तर्गत तव्यादि कृत्य प्रत्ययों का व्याकरण के निकष पर रावणार्जुनीयं महाकाव्य के सन्दर्भ में अवलोकन कर वैशिष्ट्य प्रतिपादित करना प्रकृत शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य है।

कूटशब्द– पाणिनीय अष्टाध्यायी, संस्कृत कृदन्त, प्रक्रियाग्रन्थ, प्रकृति–प्रत्यय विभाग, प्रातिपदिक, कृत्य–प्रत्यय।

प्राचीन भारतीय समाज में सामान्य जनों की बोल–चाल की अथवा व्यवहारिक भाषा के रूप में व्याप्त होने के साथ ही यह देवभाषा संस्कृत तत्कालीन बुद्धिजीवियों की भी भाषा थी जो कि उस समय प्राचीनतम एवं परिमार्जित रूप में अपने महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त थी। इसलिये उस समय के विज्ञान एवं अन्य ज्ञान–परम्पराओं की विभिन्न शृंखलाओं को जानने के लिये अथवा समझने के लिये संस्कृत भाषा का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। अब चूँकि किसी भी भाषा के मानकीय रूप को जानने के लिये अथवा उस भाषा में सृजित समस्त साहित्य को जानने के लिये सर्वप्रथम उस भाषा के व्याकरण का समुचित ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक होता है। अतः संस्कृत भाषा के ज्ञान के लिये अथवा संस्कृत में लिखे गये साहित्य को समझने के लिये इस भाषा के आधार अर्थात् संस्कृत व्याकरण को जानना और समझना अत्यावश्यक है। यद्यपि संस्कृत भाषा पर अनेक व्याकरण ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं, यथा– ऐन्द्र व्याकरण, चान्द्रव्याकरण, काशकृत्स्न व्याकरण[1] आदि। किन्तु इन सब में से समग्र वैज्ञानिकता को ग्रहण करते हुये आचार्य पाणिनि द्वारा रचित व्याकरण को पौरस्त्य एवं पाश्चात्य चिन्तक विद्वानो तथा भाषा वैज्ञानिकों ने मणि रूप में पाणिनीय व्याकरण को ही संस्कृत भाषा का प्रमुख एवं उत्कृष्ट व्याकरण माना है। आचार्य पाणिनि द्वारा रचित अष्टाध्यायी पाणिनीय व्याकरण का प्रमुख एवं प्रसिद्ध ग्रन्थ है। जिसके अन्तर्गत उनके अन्य ग्रन्थों धातुपाठ, गणपाठ, लिंगानुशासन तथा उणादिपाठ का भी समावेश भी है। इसलिये पाणिनि व्याकरण को पंचपाठी भी कहा जाता है। इसमें कुल आठ अध्याय हैं तथा प्रत्येक अध्याय चार–चार पदों में विभक्त है जिनकी संख्या 8 गुणा 4=32 हो जाती हैं। इस ग्रन्थ में लगभग चार हजार सूत्र हैं। इसी क्रम इस व्याकरण को और अधिक स्पष्ट एवं भाषा सापेक्ष बनाने का अतुलनीय एवं अविस्मरणीय कार्य आचार्य कात्यायन तथा महर्षि पतंजलि ने क्रमशः वार्तिक तथा महाभाष्य की रचना कर किया। इन्ही तीनो को संस्कृत व्याकरण का त्रिमुनि कहकर अभिहित किया जाता है। यद्यपि पाणिनीय व्याकरण संस्कृत भाषा का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण करता है तथापि केवल अष्टध्यायी क्रमानुसार संस्कृत व्याकरण को समझने का कार्य काफी कठिन प्रतीत होता दिखाई पड़ता है। इसलिये इसको समझने हेतु कुछ प्रक्रिया ग्रन्थों की रचना विद्वानों द्वारा की गयी, जिनमें अष्टाध्यायी के भिन्न–भिन्न सूत्रों को सन्धि, समास, कारक आदि विषयों को आधार बनाकर अलग–अलग प्रकरणों में उनका निर्धरण कर प्रायोगिक दृष्टि से उनका एक क्रमबद्धित स्वरूप निर्धरित किया। इस क्रम में प्रसिद्ध वैयाकरण आचार्य भट्टोजिदिक्षित ने वैयाकरणसिद्धान्त कौमुदी नामक प्रक्रिया ग्रन्थ की रचना की। उनके पश्चात् उनके ही शिष्य आचार्य वरदराज द्वारा इसके लाघवरूप को मध्यसिद्धान्तकौमुदी तथा लघुसिद्धान्तकौमुदी की रचना कर उपस्थापित किया गया। इसके पश्चात् और भी प्रक्रिया ग्रन्थों की रचना इस परम्परा में हुयी परन्तु उक्त तीनो ग्रन्थों का ही महत्त्वपूर्ण स्थान इस परम्परा में दृष्टिगोचर होता है। वर्तमान समय में पाणिनीय व्याकरण प्राचीन एवं नव्यव्याकरण के रूप में दो धाराओं में विभक्त है। प्राचीन धारा में अष्टाध्यायी क्रम से सूत्रानुसारी काशिका, महाभाष्य आदि ग्रन्थों का अध्ययन–अध्यापन होता है वहीं नव्य धारा में प्रक्रियाग्रन्थ वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी तथा इसके व्याख्यात्मक भाग प्रौढ़मनोरमा आदि का पठन–पाठन किया जाता है।

संस्कृत व्याकरण का एक प्रसिद्ध नियम है 'अपदं न प्रयुंजीत्' अर्थात् जो पद नही है उसका इस भाषा में प्रयोग का विधान नही किया जा सकता। क्योंकि संस्कृत व्याकरण में प्रकृति और प्रत्यय के योग से ही पद निर्माण की प्रक्रिया पूर्ण होती है। इसलिये पाणिनीय–अनुशासन में प्रकृति–प्रत्यय विभाग के द्वारा ही शब्द साधुत्व का ज्ञान सम्भव होता है। पाणिनीय व्याकरण के अनुसार पदों को

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 17, (2022) 79-84 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v17i1.12

''सुप्तिङन्तं पदम्'' इस सूत्र के आधार पर सुबन्त तथा तिड़ंत दो भागों में विभक्त गया है। जिनमें तिबादि 18 प्रत्ययों से निष्पन्न होने वाले पद तिङन्त तथा सुप् आदि इक्कीस प्रत्ययों के संयोग से निष्पन्न होने वाले पद सुबन्त संज्ञा से अभिहित किये जाते हैं। इनमे तिङन्त पद मूलधातु या प्रत्ययान्त धातु से तथा सुबादि प्रत्यय ङ्यन्त, आबन्त तथा प्रातिपदिकों से विहित होते हैं। पाणिनीय अष्टाध्यायी के अन्तर्गत प्रातिपदिक संज्ञा करने वाले दो सूत्रों का विधान हुआ है। जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि पाणिनि द्वारा दो प्रातिपदिकों–अव्युत्पन्न तथा व्युत्पन्न को पाणिनीय व्याकरण में प्रयोग किया गया है। अव्युत्पन्न से तात्पर्य उन प्रातिपदिकों से है जिनका एक निश्चित अर्थ तो होता है, परन्तु प्रकृति प्रत्यय द्वारा उनके विभाग की कल्पना नही की जा सकती अतः उन प्रातिपदिकों की प्रातिपदिक संज्ञा **'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्'** के अनुसार होती है। तथा जिन पदों का विधान प्रकृति–प्रत्यय विभाग से सम्भव हो उनकी **'कृत्तद्धितसमासाश्च'** इस सूत्र के द्वारा प्रातिपदिक संज्ञा का विधान है। इस प्रकार व्युत्पन्न प्रातिपदिकों को तीन भागों कृदन्त, तद्धित तथा समासान्त विभाजित किया जा सकता है।

धातुओं से दो प्रकार के प्रत्यय विहित होते हैं– कृत् तथा तिङ्। **'कृदतिङ्'** सूत्र के नियमानुसार कृत् संज्ञा करने वाले धातु से विहित 18 प्रत्ययों के अतिरिक्त वे सभी प्रत्यय कृत् कहलाते हैं जिनका पाणिनि अष्टध्यायी के तृतीय अध्याय के **धातोः** सूत्र के अधिकार में होता है। कहने का तात्पर्य है कि वे सभी सुबन्त पद जो धातु से निष्पन्न होते हैं वे कृत् प्रत्ययान्त होते हैं। इसलिये संस्कृत भाषा में बिना किसी तिङन्त–क्रिया पद के केवल कृदन्त पदों से ही व्यवहार सम्भव हो जाता है। इसलिये संस्कृत साहित्य में कृदन्तों का प्रयोग बहुतायत से होता है। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कृदन्त प्रकरण के ज्ञान के बिना संस्कृत भाषा तथा व्याकरण दोनो का ज्ञान सम्भव नही है। कृदन्त को चार भागों में विभाजित किया गया है– कृत्य, पूर्वकृदन्त, उणादि तथा उत्तर कृदन्त। चूँकि शोधपत्र का विषय कृदन्त प्रकरण के अन्तर्गत केवल तव्यादि[2] कृत्य प्रत्ययों का रावणार्जुनीयं महाकाव्य के सन्दर्भ में वैशिष्ट्य प्रतिपादित करना है, इसलिये अब प्रकृत महाकाव्य में कृत्य प्रत्ययों का विवेचन प्रारम्भ करते हैं।

संस्कृत साहित्य में महाकाव्य लेखन की समृद्ध परम्परा में प्राचीन काल से एक परम्परा ऐसी भी रही है जिसमें विभिन्न शास्त्रों के निकष पर महाकाव्यों की रचना की गयी। इसी क्रम में संस्कृत भाषा के कवियों ने अपनी कल्पना का प्रसार कर विभिन्न शास्त्रों मुख्यतः व्याकरण शास्त्र को लक्ष्य कर अनेक शास्त्रकाव्यों अथवा उदाहरण काव्यों का प्रणयन किया। जिनमें आचार्य भट्टिकृत रावणवध तथा महाकवि भट्टभीम कृत रावणार्जुनीयं महाकाव्य प्रमुख स्थान रखते हैं। औचित्य सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य क्षेमेन्द्र ने अपने ग्रन्थ सुवृत्ततिलक में काव्य के कुछ अन्यविध भेदों में शास्त्र, काव्य, शास्त्रकाव्य तथा काव्यशास्त्र की चर्चा करते हुये महाकवि भट्टि कृत रावणवध तथा श्री भट्टभीम कृत रावणार्जुनीयं महाकाव्य का काव्यशास्त्र के रूप में उल्लेख किया है–

''शास्त्रं काव्यं शास्त्रकाव्यं काव्यशास्त्रं च भेदतः।''
''शास्त्रकाव्यं चतुर्वर्गप्रायं सर्वोपदेशकृत।
भट्टिभौमककाव्यादि काव्यशास्त्रं प्रचक्षते।।''[3]

संस्कृत साहित्य में प्राचीन काल से ही सरल एवं सरस रीति से व्याकरणानुशासित पद प्रयोगों के अध्ययन तथा अभ्यास करवाने के लिये शास्त्रकाव्यों के प्रणयन की परम्परा रही है। इसी परम्परा में व्याकरणार्णवकर्णधार महाकवि भट्टभीम कृत रावणार्जुनीयं व्याकरणशास्त्र ज्ञान एवं काव्य प्रतिभा के मंजुल सामंजस्य की अतिविशिष्ट रचना है। यह पाणिनिअष्टाध्यायी के पाठक्रमानुसार सूत्रोदाहरण से युक्त एक उत्कृष्ट रचना है। महाकवि भट्टभीम द्वारा अष्टाध्यायी के सूत्रक्रमानुसार प्रकृत महाकाव्य में काव्यकथानक के अनुरूप सूत्रोदाहरणों के रचना के इस क्रम में अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के प्रत्यय

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 17, (2022) 79-84 DOI: https://doi.org/10.51220/hjssh.v17i1.12

पाद के आधार पर रावणार्जुनीयं महाकाव्य के नवम सर्ग की रचना की है। इसमे महाकवि द्वारा इस सर्ग के अठारवें श्लोक से **"कृदतिङ्"** इस सूत्र के अधिकार में द्वादश सर्ग पर्यन्त अष्टाध्यायीक्रमानुसार कृत् प्रत्यय के अनेकों उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। महाकाव्य के कथानक के क्रम में रावण के मन्त्री शुक द्वारा नर्मदा नदी के वर्णन के सन्दर्भ में रावण की स्तुति तथा उसकी प्रशंसा, रावण की सेना का नर्मदा स्नानेच्छा, स्नान का महाफल तथा इसी क्रम में रावण के राक्षसों के द्वारा किये गये उपद्रव के सन्दर्भ में महाकवि द्वारा कृत्प्रयय के अधिकार में सूत्रक्रमानुसार उदाहरणों को प्रस्तुत करते हुये व्याकरण शास्त्र तथा काव्यशास्त्र ज्ञान का अत्यन्त मंजुल सामंजस्य का यह अभिनव प्रयोगप्रदर्शन प्रकृत महाकाव्य के माध्यम से उपस्थापित किया है। अब महाकाव्य में वर्णित कथानक के क्रमानुसार कृत्प्रत्यय के अधिकार में तव्यादिकृत्य प्रत्ययों के उदाहरणों को प्रस्तुत करते हैं–

नर्मदा नदी के वर्णन के अवसर पर मन्त्री शुक रावण की स्तुति करते हुये रावण से कहता है कि हे राजन्! आपको इस नदी में मज्जनादि सभी कर्म कर लेने चाहिये क्योंकि इसके द्वारा आपका परिश्रम भी दूर हो जायेगा और आपके द्वारा शीघ्रता पूर्वक पुण्यचय भी प्राप्त कर लिया जायेगा–

"**कर्तव्यम**शेषमत्र नद्यां **करणीयं** तव मज्जनादियुक्तम्।
जेयश्चापरिश्रमोऽमुना ते **लभ्यः** पुण्यचयः सुखेन चाशु।।"[4]

प्रस्तुत पद्य में **'कर्तव्यम्'** तथा **'करणीयम्'** इन दोनो पदों में **"तव्यतव्यानीयरः"** इस सूत्र से कृ धातु में तव्य तथा अनीयर् प्रत्यय के संयोग से उक्त पद निष्पन्न हुये हैं। यथा– कृ+तव्य=कर्तव्यम् तथा कृ+अनीयर्=करणीयम्। पुनः इसी पद्य में **'अचो यत्'** इस सूत्र से अजन्त जि धातु में कृत् संज्ञक यत् प्रत्यय का विधान होने से **जेयः**(जी+यत्) शब्द तथा **'पोरदुपधात्'** इस सूत्र से अकार उपधा वाली पर्वगान्त धातु होने से लभ् धातु में यत् प्रत्यय होने से लभ्यः (लभ्+यत्) शब्द सिद्ध होते हैं। उक्त प्रसंगानुसार एक ही श्लोक में सूत्राक्रमानुसार उदाहरणों का यह प्रयोग महाकवि की प्रतिभा तथा अनुसंधेय महाकाव्य की महत्ता तथा प्रासंगिकता को द्योतित करता है। इसी क्रम में पुनः शुक रावण की प्रशंसा करते हुये कहता है–

"चर्यां तव वेत्ति को रिपूणां **नायम्यो** जगतीह यस्य कश्चित्।
अनवद्यविचेष्टितोऽसि गृह्या न हि **वर्याः** सह ये त्वया निरूद्धाः।।"[5]

उक्त पद्य में "**गद्–मद्–चर–यमश्चानुपसर्गे**" इस सूत्र के अनुसार उपसर्ग रहित चर् धातु में यत् प्रत्यय के संयोग से चर्या (चर्+यत्+टाप्) पद की निष्पत्ति होती है। जिसका अर्थ है गति, भक्षण अथवा व्यवहार। इसी प्रकार यम् धातु में नञ्+यम्+यत् करने से अयम्य (शान्त न करने योग्य) पद की सिद्धि होती है। पुनः "**अवद्य–पण्य–वर्या–गर्ह्य–पणितव्यानिरोधेषु**" इस सूत्र से अवद्य, पण्य, वर्य शब्द क्रमशः गर्ह्य, पणितव्य तथा अनिरोध अर्थों में यत्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं। उक्त प्रसंग में अनवद्य तथा वर्या पद्युगल उक्त सूत्र के उदाहरण हैं।

इसके पश्चात् नर्मदा नदी में स्नान के फल के सन्दर्भ में जो प्रसंग महाकवि द्वारा प्रस्तुत किया गया है उस प्रसंग में कृत्संज्ञक क्यप् प्रत्यय के अष्टाध्यायी सूत्रक्रमानुसार उदाहरणों की सुन्दर झांकी पाठकों के समक्ष दृष्टिगोचर होती है। यथा–

"पयोधिना सार्ध**मर्जय**माप्तं ययेश सेयं प्रवरापगास्यात्।
मिथ्योद्यमे तन्नहि **सत्यवद्यं** स्नात्वा नरो गच्छति **देवभूयं**।।"[6]

"स्नानादियं पुण्यतमा जनानां न **ब्रह्महत्या**मपि नोच्छिनत्ति।
स्तुत्या सदेत्या च ततः प्रयत्ना**ज्जुष्या** गुरोर्मूर्तिरिवेह **शिष्यैः**।।"[7]

प्रस्तुत पद्यों में अष्टाध्यायी सूत्रपाठक्रमानुसार चार सूत्रों के उदाहरण क्रमशः प्रयुक्त किये गये हैं। यथा– यहाँ **"वदः सुपि क्यप्च"** इस सूत्र के अनूसार अनुपसर्ग वद् धातु से उपपद होने पर क्यप् तथा यत् दोनो

प्रत्यय होते है। यथा– मिथ्योद्यम् (वद्+क्यप्), क्यप् होने के कारण यहाँ पर वद् के व को वचिस्वपि सूत्र से सम्प्रसारण हो गया। इसी प्रकार **"भुवि भावे"** सूत्र से अनुपसर्ग भू धातु में सुबन्त उपपद होने पर भाव अर्थ में क्यप् प्रत्यय होता है। यथा– देवभूयम् (देव+भू+क्यप्)। इसी क्रम में "**हनस्त च**" इस सूत्र से अनुपसर्ग हन् धातु से सुबन्त उपपद रहते भाव में क्यप् प्रत्यय होता है। यथा– ब्रह्महत्याम् (ब्रह्म+हन्+क्यप्+टाप्)स्त्रियायाम्, द्वि0एक0। तथा **"एति–स्तु–शास्वृदृजुषः"** इस सूत्र के अनुसार स्तु, एति, जुष्, शास् इन धातुओं से क्यप् प्रत्यय का विधान किया गया है। इस सूत्र के उदाहरण इस प्रकार से हैं–**स्तुत्या**= स्तु (ष्टुंञ्)+क्यप्+टाप्, प्रथमैकवचनम्। **जुष्या**= जुषी+क्यप्+टाप्, प्रथमैकवचनम्। **समेत्या**= सम्+इण्+क्यप्+टाप्, प्रथमैकवचनम्। इस उदाहरण में इत्य होने से "ह्रस्व पिति कृति" से तुक् का आगम हुआ है। अब यहाँ पर कुछ क्यप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाने वाले कुछ सूत्रोदाहरणों को प्रस्तुत करते हैं–

"स **राजसूय**क्रतुयाजिघाती निजप्रभावाहत**सूर्य**तेजाः।
अकृष्टपच्यक्षितिसस्यभोजी तस्या**मृषोद्यं** वचनं नुनाव।।"[8]
"**अव्यथ्य**शक्तिर्बहु**कुप्य**धामा **रूच्यां** नदीं सस्पृहमीक्षते यः।"[9]

प्रस्तुत पद्यों में रावण के वर्णन प्रसंग में महाकवि द्वारा **"राजसूय–सूर्य–मृषोद्य–रूच्य–कुप्य–कृष्ट–पच्याव्यथ्याः"** इस सूत्र के अनुसार राजसूय, सूर्य, मृषोद्य, रूच्य, कुप्य, कृष्ट, पच्या, अव्यथ्या इन शब्दों से क्यप् प्रत्ययान्त निपातन का विधान हुआ है।

यहाँ पर रावण के राक्षस सैनिकों के द्वारा नर्मदा के तट पर उपद्रव को चित्रित किया गया है। उनके द्वारा किस प्रकार वहाँ की प्राकृतिक सम्पदा का विध्वंस किया गया तथा किस प्रकार वहाँ संध्या–वंदन कर रहे मुनियों का नाश किया प्रकृत प्रसंग में शास्त्रतन्त्रानुसार पुनः अष्टाध्यायी के सूत्रपाठ के क्रम का ध्यान रखते हुये **ण्यत्** प्रत्यय का विधान किया गया है। यथा–

"निशाचरौघस्तटमेत्य नद्याः कुर्वन्न **कार्याणि** पचन्न **पाक्यम्**।
लुनन्न लाव्यानि वनानि चक्रे पूर्वप्रणम्यः कदनं मुनीनां।।"[10]

प्रकृत पद्य में **"ऋहलोर्ण्यत"** इस सूत्र के आश्रय में ऋवर्णान्त तथा हलन्त धातुओं से **ण्यत्** प्रत्यय का विधान हुआ है। यथा पद्य में प्रयुक्त कार्याणि (कृ+ण्यत्=कार्यम्) पद में कृ धातु)वर्णान्त है तथा पाक्यम् (पच्+ण्यत्) पद में पच् धतु हलन्त है। पद्य की दूसरी पंक्ति में प्रयुक्त लाव्यानि (लूञ्+ण्यत्=लाव्यम्) पद में **"ओरावश्यके"** सूत्र के अनुसार उवर्णान्त धातुओं से आवश्यक द्योतित होने पर ण्यत् प्रत्यय का विधान किया गया है।

उक्त प्रसंग के क्रम में यहाँ पर ण्यत् प्रत्ययनिपातन के सन्दर्भ में भी कुछ विशेष सूत्रों का अवलम्बन महाकवि द्वारा किया गया है। प्रकृत प्रसंगानुसार विशेष सूत्रों के लिये विशेष पदों का समावेश इस ग्रन्थ की विशेषता और महाकवि के पाण्डित्य को भी परिलक्षित करता है। यद्यपि नवम् सर्ग के इस अंश में महाकवि द्वारा नर्मदा नदी के माहत्म्यकीर्तनादि का वर्णन बड़े विस्तार से किया है तथापि इसी क्रम में राक्षसवर्णन प्रसंग में शास्त्ररीति को दर्शाते हुये अष्टाध्यायी के सूत्रों के क्रमानुसार राक्षसवर्णनानुकूलयोग्यता को धारण करने वाले निपातनसिद्ध ण्यत् प्रत्ययान्त उदाहरण पदों को काव्य के माध्यम से राक्षसों के उपद्रववर्णन के द्वारा सम्पादित किया है। यथा–

"**आनाय्य**विध्वंसकृदीति **वाच्यो निस्त्राप्य**चेताः खललोकलाप्यः।
आ**चम्य**हीनः कृतभीत**राप्य**श्चचार तत्रा क्षणदाचरौघः।।"[11]
अपाय्यदोषा जनता**निकाय्याः** प्रविश्य रक्षाः परिधूय **धाय्याः**।
सानाय्यविध्वंसकृतोविचेरू रक्षोगणास्तत्र निरस्तशङ्कम्।।"[12]

यहाँ पर **"आनाय्योऽनित्ये"** इस सूत्र के आश्रय में आनाय्या शब्द से आङ् पूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्ययान्त अनित्य अर्थ अभिधेय होने पर निपातन किया जाता है। यथा– आङ्+नी+ण्यत्=आनाय्य जिसका अर्थ है दक्षिणाग्नि क्योंकि गार्हपत्य कुण्ड से लाकर प्रज्वलित किये जाने के कारण यह अनित्य है। इसलिये अनित्य अर्थ अभिधेय होने से यहाँ पर आनाय्य शब्द को ण्यत् प्रत्यय हुआ। इसी प्रकार **"प्राणाय्योऽसंमतौ"** इस सूत्र से प्र उपसर्ग पूर्वक नी धातु से अपूजा अर्थ अभिधेय होने पर ण्यत् प्रत्यय तथा वृद्धि कर लेने पर प्राणाय्य शब्द में निपातन किया जाता है। तथा **"पाय्य–सान्नाय्य–निकाय्य–धाय्या–मान–हवि–र्निवास–सामधेनीषु"** इस सूत्र के अनुसार पाय्य, सान्नाय्य, निकाय्य, धाय्य शब्दो का क्रमशः मान, हवि, निवास, सामधेनी अर्थ होने पर निपातन करने पर ण्यत् प्रत्यय होता है। इस प्रकार महाकवि भट्टभीम द्वारा अष्टाध्यायी सूत्रपाठक्रमानुसार अनुसंधेय महाकाव्य में तव्यादि कृत्य प्रत्ययों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष– व्याकरण शास्त्र के ज्ञान के बिना संस्कृत भाषा का ज्ञान अधूरा है, इस दृष्टि से प्रत्येक जिज्ञासु अथवा पाठक के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि उसके द्वारा अष्टाध्यायी के सूत्रों का अध्ययन किया जाय तथा उन सूत्रों को जाना जाय क्योंकि अष्टाध्यायी ग्रन्थ की जो प्रक्रिया आचार्य पाणिनि द्वारा प्रतिपादित की गयी है वह अत्यन्त वैज्ञानिकी एवं तर्क पूर्ण है। पाश्चात्य विद्वान् मोनियर विलियम इस ग्रन्थ की महत्ता को स्पष्ट करते हुए प्रशंसा करते हैं–'संस्कृत का व्याकरण (अष्टाध्यायी ग्रन्थ) मानव–मस्तिष्क की प्रतिभा का आश्चर्यतम भाग है, जो कि मानव–मस्तिष्क के सामने आया है।' व्याकरण ज्ञान के अभाव में कोई विद्वान् व्यक्ति भी काव्य को समझने में भी समर्थ न होगा परन्तु इस ग्रन्थ का अध्ययन करते हुये पाठक व्याकरण के साथ–साथ ही मधुर काव्य–रस का भी आस्वादन करता हुआ चलता है, यह इस महाकाव्य की प्रमुख विशेषता है। व्याकरण शास्त्रज्ञान तथा काव्य प्रतिभा के मंजुल सामंजस्य के रूप में यह अनुसंधेय महाकाव्य शास्त्रकाव्य परम्परा का अद्वितीय ग्रन्थ है।

सन्दर्भ सूची

1.**ऐन्द्रं चान्द्रं काशकृत्सनं कौमारं शाकटायनम्।**
सारस्वतं चापिशलं शाकलं पाणिनीयकम्।। लघुसिद्धान्तकौमुदी श्रीधरमुखोल्लासिनी सहित, भूमिका भाग
2.लघुसिद्धान्तकौमुदी श्रीधरमुखोल्लासिनी सहित, पृ0 773
3.सुवृत्ततिलक 3/14
4.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/18
5.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/20
6.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/23
7.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/24
8.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/27
9.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/28
10.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/32
11.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/33
12.रावणार्जुनीयं महाकाव्य, 9/34